शास्ता भगवान् बुद्ध की गम्भीर प्रतीत्यसमुत्पाद-देशना के माध्यम से ‘सुभाषितह्रदय’ नामक स्तुति

गुरु मञ्जुघोष को नमस्कार

जिसको(यथावत्) देखकर उपदेश देने वाले के अधिगम और देशना अनुत्तर होते हैं, उस प्रतीत्यसमुत्पाद को जानकर उपदेश देने वाले तथागत की वन्दना करता हूँ।1।

जगत् की जितनी विपत्ति हैं, उनका मूल अविद्या है। जिसको देखने से उसका निवारण हो जाता है, उसको प्रतीत्यसमुत्पाद कहा जाता है।2।

तब बुद्धिमान(पुरुष) को प्रतीत्यसमुत्पाद का मार्ग आप(बुद्ध) के शासन का मर्म ही कैसे मालूम नहीं होगा? ।3।

अतः हे नाथ! वैसा होने पर प्रतीत्यसमुत्पाद की देशना के अतिरिक्त किसी को आपकी स्तुति का और अद्भुत माध्यम क्या मिलेगा?।4।

जो जो प्रत्यय पर आश्रित होता है, वह वह स्वभाव से शून्य है, इस वचन से अधिक आश्चर्यमय सदुपदेश की विधि और क्या हो सकती है?।5।

जिस रूप में(प्रतीत्यसमुत्पाद का) ग्रहण करने से बाल जनों(प्रथग्जनों) का अन्तग्राह(उच्छेदांत) रूपी बंधन दृढ होता है, वही(प्रतीत्यसमुत्पाद) विद्वानों के लिए प्रपंचों ले समस्त जालों को छेदने का उपाय हप जाता है।6।

‘शास्ता’ आप ही हैं, क्योंकि यह देशना अन्यत्र देखने को नहीं मिलती है। (अन्य) तैर्थिकों के शास्ता को भी ‘शास्ता’ कहना श्रगाल को सिंह कहने जैसी चाटुकारिता है।7।

अहो शास्ता,अहो शरण, अहो परमवादिन्, अहो नाथ, मैं उस शास्ता को प्रणाम करता हूँ, जिसने प्रतीत्यसमुत्पाद का सदुपदेश दिया।8।

हितकारिन्, आपने जगत के कल्याण के लिए(जिसे) कहा,(वह) शासन के सार शून्यता के निश्चय का अतुलनीय हेतु है।9।

(उस)प्रतीत्यसमुत्पाद ने नय (को) जो विरुद्ध और असिद्ध देखते हैं वे(अन्य लोग) आपके सिद्धान्त को ठीक से कैसे जान सकेंगे?।10।

आप का(अभिमत है कि) जब शून्यता(को) प्रतीत्यसमुत्पाद के अर्थ में देखेंगे,तब स्वतः शून्यता एवं क्रिया और कर्ता की उपपत्ति भी अविरुद्ध(सिद्ध) होगी।11।

(और) उससे विपरीत देखने पर शून्य में क्रिया की अयोग्यता होगी (और) क्रियावान में शून्यता का अभाव होकर विषम-प्रपात में पतन होगा।12।

इसलिए आपके शासन में प्रतीत्यसमुत्पाद का दर्शन सुप्रशंसित है। वह भी न तो अत्यन्ताभाव है और न स्वभाव से सत् ही है।13।

निरपेक्ष(धर्म) खपुष्प के समान है,इसलिए(कुछ भी) अनाश्रित नहीं है। भाव के स्वभाव से सिद्ध होने पर(उत्पत्ति के लिए उसका) हेतु और प्रत्यय पर आश्रित(होना) विरुद्ध होगा।14।

क्योंकि प्रतीत्यसमुत्पाद के अतिरक्त कोई भी धर्म नहीं है,अतः स्वभाव से शून्य होने के अतिरिक्त कोई धर्म नहीं,(ऐसा) कहा गया है।15।

स्वभाव का परिवर्तन नहीं होता है, इसलिए(यदि) धर्मों का कोई स्वभाव होगा तो निर्वाण की उपपत्ति नहीं होगी और सभी प्रपंचों का निराकरण भी नहीं होगा(ऐसा) कहा गया है।16।

इसलिए विद्वत्समुदाय में सिंहनाद के साथ बार-बार सुष्ठुतया प्रतिपादित इस(सिद्धांत) का कौन उलंघन कर सकता है कि(सर्व-धर्म) स्वभाव से रहित है।17।

यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि-स्वभावतः कुछ नहीं है, तथा अमुक पर आश्रित करके अमुक की उत्पत्ति सारी व्यवस्था युक्त है, ये दोनों बातें अविरुद्ध और संगत।18।

प्रतीत्यसमुत्पाद होने के कारण(लोगों की) अन्तदृष्टि पर अश्रितता नहीं होगी। हे नाथ! ऐसा सदुपदेश तो आपके वचन की अनुत्तरता का कारण है।19।

'यह सब स्वभाव से शून्य' है, और 'इससे यह फल उत्पन्न होगा' ये दो निश्चय निर्बाध होते हुए परस्पर सहायक हैं।20।

"इन(उक्त दो निश्चयों) से(अधिक) आश्चर्यजनक और अदभुत क्या हो सकता है"-इस प्रकार(यदि) आपकी स्तुति करें तो स्तुति होगी,अन्यथा नहीं।21।

मोह के वशीभूत होकर जो लोग आपसे प्रतिहत हैं,उन(लोगों) को 'निःस्वभावता' शब्द सहन न हो तो क्या आश्चर्य?।22।

(परन्तु) आप के प्रिय वचन-कोष प्रतीत्यसमुत्पाद को स्वीकार करके शून्यता का स्वर न सह पाने वालों को (देखकर) मैं(चोंग्खापा सुमतिकीर्ति) आश्चर्य में पड़ गया हूँ।23।

निःस्वभावता में आनयन के अनुत्तर द्वार प्रतीत्यसमुत्पाद के नाम पर जब स्वभाव ग्रहण किया जाता है, तो।24।

परम आर्यों द्वारा आसेवित, अद्वितीय प्रवेशतट,(बुद्ध) को प्रसन्न करने वाले, उस सुमार्ग पर वे जन किस उपाय से लाये जा सकेंगे? ।25।

'स्वभाव अकृत्रिम और निरपेक्ष है' तथा 'प्रतीत्यसमुत्पन्न सापेक्ष और कृत्रिम है,' ये दोनों(बातें) एक ही आधार पर अविरुद्ध और संगत कैसे होगी? ।26।

इसलिए जो प्रतीत्यसमुत्पाद स्वभाव से तो प्रारम्भ से ही विविक्त हैं, तथापि उसी स्वभावविविक्ताता पर(सस्वभाव के रूप में) आभासित होता है, अतः यह सब माया की भांति कहा गया है।27।

आपके द्वारा जैसा निर्दिष्ट है, उस पर कोई भी प्रतिवादी धर्मतः सामना नहीं कर सकता(ऐसा) कहना भी(मुझे) इस(प्रतीत्यसमुत्पाद की देशना) से ही भलीभांति ज्ञात हुआ।28।

यदि 'क्यों' कहें तो(उत्तर है कि) इस(प्रतीत्यसमुत्पाद) के कथन से दृष्ट और अदृष्ट वस्तुओं में समारोप और अपवाद का अवसर दूर किया गया है।29।

आपके वचन को अनुपम देखने का हेतु प्रतीत्यसमुत्पाद ही है। इसी मार्ग से अन्य वचनों की भी प्रामाणिकता का निश्चय होता है।30।

यथार्त देखकर सुदेशना देने वाले आपके द्वारा(मार्ग का) शिक्षण करने से सभी विपत्तियाँ दूर हो जाती हैं, उससे सभी दोषों का मूल(अर्थात अविद्या या आत्मदृष्टि)का निवारण हो जाता है।31।

आपके शासन से विमुख होकर दीर्घकाल तक श्रम करना भी दोषों को(अपने) पीछे-पीछे बुलाने के जैसा है,(क्योंकि उससे) आत्मदृष्टि स्थिर होती है।32।

अहो! जब विद्वानों को इन दोनों का अंतर ज्ञात हो जायेगा, तब इससे(वह) अंतर्ह्रादय से आपका आदर क्यों नही करेंगे?।33।

आपके अनेक वचनों का तो कहना ही क्या? अंशमात्र के सामान्य अर्थ का भी निश्चय होने पर उस(जानने वाले) को(वह) परम सुख देता है।34।

हा! मेरी बुद्धि मोह से हट हो गई। दीर्घकाल से शरणागत होने पर भी इस तरह की गुण राशि का अंशमात्र भी ज्ञात नहीं कर पाया।35।

तथापि मृत्युपति(यमराज) की ओर अभिमुख जीवन धारा के नष्ट होने के पहले ही (मुझे) आप (भगवान् बुद्ध) पर किंचित् विश्वास हुआ, यह भी सौभाग्य ही है, ऐसा समझता हूँ।36।

देशनाओं में प्रतीत्यसमुत्पाद की देशना और प्रज्ञाओं में प्रतीत्यसमुत्पाद का ज्ञान ये दोनों लोक में जिनेद्र की भांति श्रेष्ट हैं, यह आप ही भली प्रकार जानते हैं,अन्य (लोग) नहीं।37।

आपकी जितनी देशनाएं हैं, वे प्रतीत्यसमुत्पाद के प्रस्थान से ही प्रवृत्त होती हैं। वे भी निर्वाण के लिए हैं।आपका कोई भी कार्य (ऐसा) नहीं जो शान्ति (अर्थात निर्वाण) देने वाला न हो।38।

अहो, आपका शासन जिन के श्रवण-पथ में जायेगा, वे सब शांत हो जायेंगे। अतः आपके शासन को ग्रहण करने में किसको अरुचि होगी?।39।

(आपके वचनों से) समस्त परवादियों का पराभव हो जाता है (अर्थात कोई भी परवादी धर्मतः आपके मतों का खण्डन नहीं कर पता). वह(नय) पूर्वापर-विरोध से शून्य भी हैं, और (वह) पुरुषों को दो अर्थ दिलाता है। अतः इस नय में मेरी रूचि बढ़ गई है।40।

इस(प्रतीत्यसमुत्पाद के ज्ञान के) लिए आपने कहीं (किसी जन्म में) शरीर और कहीं प्राण, प्रिय बन्धु और सम्पत्ति समूह का असंख्य कल्पों तक बार-बार त्याग किया है।41।

मैं(कितना) अभागा हूँ कि जिस (प्रतीत्यसमुत्पाद) के गुणों को देखकर आपका मन(उसी) भांति खिंच गया जैसे कांटे द्वारा मछली, उसी धर्म को आपसे साक्षात् नहीं सुन पाया।42।

उस (आपस से साक्षात् धर्मोपदेश न सुन पाने के) शोक का वेग मेरे मन को उसी प्रकार नहीं छोड़ पाता है, जिस प्रकार माता का प्रिय पुत्र के पीछे-पीछे मन।43।

इस पर भी, आपके वचन का चिंतन करने पर(बत्तीस) लक्षणों और (अस्सी) व्यंजनों की श्री से प्रज्वलित प्रभा के जाल से परितः आच्छन्न उस शास्ता ने ब्रह्म-स्वर से-।44।

इस(प्रतीत्यसमुत्पाद को) 'ऐसे कहा होगा,'इस कल्पना से मन में मुनि के प्रतिबिम्ब का उदय होना मात्र भी ताप पीड़ित के लिए चन्द्ररश्मि की भांति हितकर है।45।

इस प्रकार के अदभुत सुनय को भी अकुशल पुरुषों ने 'बल्वज' की भांति सर्वथा आकुलित कर दिया है।46।

इस स्थिति को देखकर मैंने अनेक प्रयत्न करके विद्वानों के (मत के) अनुसार आपके अभिप्राय का बार-बार विवेचन किया।47।

उस समय स्व तथा अपर वर्गों के अनेक ग्रंथों का अध्ययन करने पर मेरा मन उतरोत्तर संदेह के जालों से संपीडित होता गया।48।

सत् और असत् के अंतों का परिहार करके आप के अनुत्तर यान की अच्छी व्याख्या करने के लिए, जिनकी भविष्यवाणी की गई है, उन आचार्य नागार्जुन के(ग्रंथों को) ।49।

अमल अधिगम की उपलब्धि से विभूषित और प्रवचन-आकाश में 'असंग' विचरण करने वाले (आर्य असंग के ग्रंथों को) तथा अन्तग्राह रूपी अंधकार का ह्रदय से निराकरण करने वाले एवं मिथ्या-वादी-नक्षत्रों को अभिभूत करने,वाले।50।

'श्रीचन्द्र' (कीर्ति) की सुभाषित शुभ्रांशु-माला से स्फुटित किये गए उन (नागार्जुन) के ग्रन्थ-कुमुदों को गुरु (आर्य मंजुश्री आदि) की कृपा से देखने पर मेरे मन को विश्राम मिला।51।

सभी कृतियों में वाणी की ही कृति परम है, वह भी तो वह(प्रतीत्यसमुत्पाद की देशना) ही है, अतः विद्वान इससे बुद्ध की अनुस्मृति करें।52।

उस शास्ता के पश्चात् प्रव्रजित होकर, 'जिन' (तथागत) के वचनों का पर्याप्त अध्ययन करके, योग-चर्या में श्रम करने वाले एक भिक्षु (आचार्य चोंग्खापा) का उस महिर्षि (भगवान् बुद्ध) के प्रति इस प्रकार आदर उत्पन्न हुआ।53।

अनुत्तर शास्ता के शासन का इस प्रकार दर्शन गुरु की कृपा से हुआ है। इसलिए इन (स्तुतियों से प्राप्त) पुण्य अशेष जगत पर सत्कल्याण-मित्रों (गुरुओं) के अनुग्रह के हेतु के रूप में परिणत हो।54।

हितकारी (शाक्यमुनि) का शासन दुर्विकल्प रूपी पवन से बिना कम्पित हुए भव के अंत तक रहे और शासन के नय को जानकर शास्ता के प्रति विश्वास करने वाले सदा भरे रहें।55।

प्रतीत्यसमुत्पाद के तत्त्व के प्रकाशक 'मुनि के सुनय' को समस्त जन्मों में शरीर और प्राण भी त्याग करके धारण करने(मुझे) क्षणमात्र भी शिथिलता न हो।56।

उस परम नायक की अपरिमित तपस्या के अनुष्ठान-सार से साधित इस(देशना) की संवृद्धि किस उपाय से हो सकेगी, ऐसा विचार करते-करते दिन-रात व्यतीत हों।57।

शुद्ध अध्याशय से उस नय में सत्प्रयास करते समय लोकपाल ब्रह्मा, इंद्र तथा (श्रीमहा) काल आदि रक्षक भी अनन्य-मनस्क होकर सदा सहायता करें।58।

समस्त जगत के अकारण महाबान्धव,अनुत्तर शास्ता भगवान् बुद्ध के प्रति गम्भीर प्रतीत्यसमुत्पाद की देशना के माध्यम से बहुश्रुत भिक्षु सुमतिकीर्तिश्री द्वारा हिमवानों में पर्वतेन्द्र 'वो-ते-गुङ्-ग्यल' के 'ल्हा-योल-वेन-नेस-ल्हा-दिङ् अपर नाम 'नम-पर-ग्यल-वई-लिङ्' (विजयद्वीप) में इस 'प्रतीत्यसमुत्पाद-स्तुति-सुभाषितह्रदय' नामक स्तव की रचना की गई। इसके लिपिकार 'नम-खा-पल' (गगनश्री) हैं।

(अनुवादक-ज्ञलछेन नमडोल एवं नवाङ समतेन)

भवतु सर्वमंगलम्।